चतुर्भुजदास कृत 'द्वाद्शयश' की प्रासंगिकता

डॉ.सुनीता शर्मा

सीनियर असिस्टेंट प्रोफेसर,

हिन्दी-विभाग,

गुरु नानक देव विश्वविद्यालय,

अमृतसर|

साहित्येतिहासों में नाम के चतुर्भुजदास दो कवि मिलते हैं एक राधा वल्लभीय चतुर्भुजदास और दूसरा वल्लभीय | दोनों के समय में लगभग 70 वर्षों का अन्तराल है | राधावल्भीय चतुर्भुजदास का जन्म संवत् 1527 में मध्य प्रदेश के गोडवाना प्रदेश जबलपुर के समीप गढ़ा नामक गाँव में हुआ था | इनके गुरु का नाम स्वामी हितहरिवंश था | चतुर्भुजदास जी एक साथ संस्कृत और हिंदी के विद्वान थे | नाभादास द्वारा रचित भक्तमाल में चतुर्भुजदास जी को कीर्तननिष्ठ कहा गया है | जैसे कि इन पंक्तियों से स्पष्ट होता है कि –**"हरिबंश चरबल चतुर्भुज, गौड़ देश तीरथ कियौ | गयौ भक्ति प्रताप सबहिं दासत्व छढ़ायौ | राधाबल्लभ भजन अनन्यता वर्ग बढ़ायौ |"**[1] **'द्वाद्शयश' राधाबल्लभीय चतुर्भुजदास की उत्कृष्ट रचना है | इस ग्रंथ का रचनाकाल सं.1560 वि.मिलता है** |[2] रचना की भाषा बैसवाड़ी और बुन्देली प्रभावित ब्रजभाषा है| इस कृति पर संस्कृत भाषा का भी प्रभाव है | 'द्वादशयश' नाम की इस कृति का प्रकाशन श्रीहित हरिवंश सम्प्रदाय के स्वामी श्री रूपलाल ने विक्रम संवत 2066 (सन 2009) को किया | हिन्दी विश्वकोश में 'द्वादशनांपूर्ण:' कहते हुए सूर्य, मास , राशि, संक्रांति, गुहबाहु, सारिकोष्ठ, गुहनेत्र और वाजमण्डल को द्वादश वाचक शब्द कहा गया है |[3] कवि ने

'द्वादशयश' नाम सतसठ पृष्ठों की इस रचना में व्यक्ति के पूर्ण विकास हेतु बारह यशों का वर्णन किया है | जिनका परिचय निम्नलिखित है-

1. **शिक्षा सकल समाज यश**: नामक पहले यश में कवि समस्त समाज की कल्याण कामना करते हुए मनुष्यों को नाम स्मरण का संदेश दिया है | मनुष्यों को समरसता को अपनाने के लिए प्रेरित करते हुए देह-दुख को ही देह-सुख मान कर कृष्ण प्रेम का संदेश दिया है |

2. **श्रीधर्मविचार यश**: नामक दुसरे यश में प्रत्येक वर्णाश्रम के धर्म की चर्चा करते हुए ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यासाश्रम के धर्म एवं कर्तव्यों की चर्चा की है |अंततः सद्कर्मों को मोक्ष का साधन बताया है |

3. तीसरा यश '**श्री भक्ति प्रताप यश**' के नाम से है | इसमें कवि ने भक्ति का महात्म्य वर्णित किया है | कवि ने भक्ति मार्ग का प्रवर्तक शुकदेव स्वामी को बताया है जिन्होंने निगम-आगमों का अध्ययन कर यह मार्ग निकाला है | नवधा भक्ति की चर्चा करते हुए यह बताने का प्रयास किया है कि केवल एक बार नाम स्मरण से ही मोक्ष पाया जा सकता है जहां तक कि न केवल प्रेमभाव अपितु शत्रुभाव से भी अगर भगवान का स्मरण किया जाए तो ईश्वर उन्हें भी परमपद देता है|इसी यश में अच्छे भक्त के लक्षणों की भी चर्चा की है |

4. **श्री संत प्रताप यश**:नामक चौथे यश में कवि ने भक्ति एवं उद्धार हेतु साधु संगति को महत्वपूर्ण बताया है | साधु संगति से भक्ति में दृढ़ता आती है और शंकाओं का समाधान होता है जहां तक कि कवि ने साधु-संगति को मोक्ष एवं स्वर्ग प्राप्ति से भी बढकर बताया है |

5. **श्री शिक्षासर यश**:नामक यश में कवि ने शिक्षा का महत्व बताते हुए गुरु-शिष्य के सम्बंधों का एवं उनके धर्मों की चर्चा की है |

6. **श्री हितोपदेश यश** : में कवि ने शिक्षा प्राप्ति बाद परहित का उपदेश दिया है|चौरासी लाख जन्म लेने के पश्चात् ही मनुष्य शरीर की प्राप्ति होती है और इस शरीर से ऐसे कर्म करने चाहिए कि आगे जन्म-मरण से छुटकारा पाया जा सके और इस सब का आधार सद्कर्म,भक्ति एवं परसेवा ही है |

7. **श्री पतित पावन यश:**में कवि ने पतितों के उद्धार हेतु पतित पावन भगवान कृष्ण का स्मरण करने की प्रेरणा दी है |कवि का कहना है कि भगवान की शरण में जो चला जाता है ईश्वर बिना जाती-पाति की तरफ ध्यान दिए उसे शरणागति प्रदान करते हैं | इसके लिए कवि ने कई निम्न जाति के भक्तों- विदुर, कबीर, रैदास आदि के उदाहरण दिए हैं |

8. **श्री मोहिनी यश**: में कवि ने ईश्वर को मोहिनी शक्ति का वर्णन किया है जिसने सारे जगत को माया में उलझा रखा है | ईश्वर की यह मोहिनी शक्ति ही मानव को ईश्वर तक पहुँचाती है |

9. **श्री अनन्य भजन यश** :नामकरण के अनुकूल इस यश में कवि ने श्री कृष्ण के प्रति अनन्यता के भाव का संदेश दिया है | कवि का कहना है कि चाहे कोई तीर्थयात्रा करले, गऊदान दे, कल्पों तक व्रत करे, कंचनदास करे पर आराध्य के प्रति अनन्यता का भाव नहीं है तो सब व्यर्थ है |

10. **श्री राधासुप्रताप यश** : में कवि ने सम्प्रदाय के सिद्धान्तानुसार राधा का महात्म्य वर्णित किया है क्योंकि राधा ही कृष्ण की अराध्य शक्ति है | कवि का कहना है कि राधा वृंदावन धाम के जंगलों में निवास करती है और जहां राधा है वहां माया नहीं है इसलिए जिसने पुराण नहीं सुने, आगम-निगमों का मर्म नहीं जाना पर राधा के यश का गान सुना उसका कल्याण

संभव है पर जिसमें आगम-निगम पुराणों का कंठस्थ कर लिया हो कई हज़ार वर्षों तक तप भी कर लिया हो पर राधा के चरणों की धूल प्राप्त नहीं हुई | उसका मोक्ष संभव नहीं है क्योंकि कृष्ण भी राधा की इच्छानुकूल ही वर देते हैं | कवि ने यह भी बताया है कि पहले राधा 'चन्द्रनामा' के नाम से जनि जाती थी |

11. **श्री मंगलासार यश**: में कवि ने कहा कि यदि मनुष्य अभय होना चाहता है तो वेद विधि अनुसार भक्ति करके ऋषियों के उपदेशानुसार सदमार्ग का अनुसरण करके महर्षि व्यासानुसार अठारह पुराणों में दिए गये भजन के महत्व को जानते हुए शुकदेव द्वारा बताए गये भक्तिमार्ग पर चलकर ही राधा के प्रति असक्ति और नवधा भक्ति के द्वारा ही हरि प्राप्ति से मंगल संभव है |

12. **श्री विमुख मुखभंजन यश** : में कवि ने ईश्वर विमुख प्राणी को भक्ति के द्वारा ईश्वर मुख होने का मार्ग बताया है |चतुर्भुज द्वारा रचित यह द्वादशयश कृति की रचना चाहे सोलहवीं शताब्दी में हुई पर आज भी उतनी ही प्रासंगिक है |आधुनिक मानव का पथ प्रशस्त करने में इसके महत्व को नकारा नहीं जा सकता |इसकी प्रासंगिकता पर निम्नलिखित पक्षों के अंतर्गत विचार किया जा रहा है –

सामाजिक पक्ष –"समाज के साथ 'इक' प्रत्यय लगाने से सामाजिक शब्द बनता है | समाज से अभिप्राय सामुदायिक जीवन की ऐसी अनवरत एवं नियामक व्यवस्था से है जिसका निर्माण व्यक्ति पारस्परिक हित तथा सुरक्षा के निमित जाने-अनजाने कर लेते है |[4] तथा सामाजिकता से अभिप्राय समाज संबंधी |समाज के हित को ध्यान में रखते हुए जब कवि रचनाकार कृति के माध्यम से पाठक को सामाजिक संदर्भों, सामाजिक विकास एवं सामाजिक दायित्वों का ज्ञान देता है जिनका प्रभाव सार्वभौमिक और सर्वकालिक रहता है | चतुर्भुजदास कृत '

द्वादशयश' में कवि ने सर्वप्रथम एक ऐसे स्वस्थ समाज की परिकल्पना की है जिसमें रहने वाले लोग हर प्रकार से श्रम को महत्व देने वाले तथा ईमानदार, सत्यनिष्ठ एवं परोपकारी हो | इसलिए कवि ने कहा है-

"काम क्रोध तृष्णा तजि जानी |अरु षट विषन नरक के दानी |"

(द्वादशयश,चतुर्भुजदास,पृ.26)

समाज में रहते हुए कभी भी समाज को मिटाने का प्रयास कदापि न करें और जो भी व्यक्ति के पास जो हो उसे भी दूसरों को बाँट कर ही लेना चाहिए | जैसे कि इन पंक्तियों से स्पष्ट है –

"आगि गाँव वन में न लगावै | भोजन जल न अनर्पित पावै|"

(द्वादशयश,चतुर्भुजदास,पृ.26)

'शिक्षा सफल समाज यश' नामक अध्याय में कवि ने जाति-पाति से उन्मुक्त समाज की परिकल्पना की है तथा विभिन्न वर्णाश्रमों के आधार पर शिक्षित करने का उपदेश दिया है | जैसे कि ब्राह्मण वर्ण के विषय में कवि कहा है –

"प्रथम वर्ण द्विज को कहिये, बारह वर्ष भयौ ब्रह्मचरिनू |
पढ़े वेद व्रत दृढ़ धारियै, पै सकल ग्रन्थ मन जीवै जू ||
पुनि घर वसि सन्तति कीनी, सब घर कौ धर्मे प्रतिपारयौ जू |"

(दा. च., पृ.7)

कवि का कहना है कि वह देश , समाज उत्तम बन जाता है जहां रहने वाले ब्राह्मण श्रेष्ठ है | इसी प्रकार कवि ने क्षत्रियों के कर्म की सराहना करते हुए कहा है–

"क्षत्री-धर्म शूर रन-शूरो सनमुख रण तन परौ जू ||"

(दा. च., पृ.9)

इसी प्रकार कवि ने ऐसे समाज की परिकल्पना भी की है जिसमें रहने वाले मानव अच्छे गुणों के साथ-साथ समशीतोष्ण स्वभाव के हों, सहनशीलता उनमें कूट-कूट कर भरी हो **"मान-अपमान न मन में आने | निंदा अस्तुति सम करि जाने | पर त्रिय और भक्त को सहोदर | गिरिसम सहनशील, सव तजि डर | "**

आत्मविश्वासपूर्ण उन सामाजिकों के विषय में कवि कहता है-

"कर्म करैताकौ फल पावौ |"

(दा. च., पृ.11)

कवि ने सामाजिकों को यह कर्म के अनुसार फल प्राप्ति का संदेश दिया है | इसके आगे मानव को सचेत करते हुए कवि ने लिखा है-

"सावधान हरिसदन सिधारै | करै नहीं अपराध विचारै |"

(दा. च., पृ.26)

कवि ने समाज में स्त्री को भी महत्वपूर्ण स्थान दिया है इसलिए कवि का कहना है कि दूसरों की स्त्री को माता जानकर उसका सम्मान करना चाहिए|

"परत्रिय तौ माता करि जाने | लोह समान कनक उनमानै |"

(दा. च., पृ.26)

कवि ने समाज कल्याण के लिए नारी के महत्वपूर्ण योगदान की सराहना भी की है | कवि ने प्राचीन उदाहरणों के माध्यम से मां की संतान, विधवा की संतान एवं पति के रहते दुसरे व्यक्ति की संतान को जन्म देने वाली जननी की चर्चा करते हुए कहा है कि इन सब माताओं की संतानों ने समाज के विकास के लिए कैसे योगदान दिया है | इस उदाहरण से स्पष्ट है-

" क्वारी कन्यहि जो सुत होई | कानी-तस्त कहावै सोई ||
तौ गोई जनमसो व्यास कौजू |
कन्त मरत पाछे सुत जनें | गोलक नाम सवै मिलि भने ||
तौ जनै अन्ध अरु पाण्डु हें जू
कन्तहि छित जनें और हि सों जु | कुंडज नाम कहावै ज्यों जु ||
तौ यो जु पाण्डु-सुत जनिवै जू |"

(दा. च., पृ.38)

धार्मिक पक्ष- धर्म को संस्कृति का प्राण कहा गया है | 'धृ' धातु से बने धर्म का अर्थ है धारण करना, आलम्बन देना, पालन करना आदि | धर्म को परिभाषित करते हुए नरेन्द्र मोहन लिखते हैं- **"धारयते इति धर्म: अर्थात जिसका धारण हो विकास हो, रक्षा हो वही धर्म है | इसके अतिरिक्त जिससे व्यक्ति का लौकिक कल्याण हो, अभ्युदय हो और आध्यात्मिक चेतना जाग्रत हो वह भी धर्म है |"** मध्यकालीन समाज में धर्म की लहर में आहूति डालने वाले श्री चुतर्भुज दास के धार्मिक चिंतन का मूलाधार उनके सम्प्रदाय का दर्शन एवं उनका स्वानुभूति है | उनकी दृष्टि में धर्म मानवीय कर्तव्य और जीवन मूल्य का पर्याय है |धर्म को परिभाषित करते हुए कवि ने लिखा है-

"धरम सोई जो भरम गभावै || साधन सों, हरि सो गति रति लावै |''

(दा. च., पृ.5)

राधा सम्प्रदाय से दीक्षित होने के कारण कवि ने सम्प्रदाय सिद्धांतों को धर्म के सिद्धांत रूप में प्रस्तुत किया है और राधाकृष्ण युगल जोड़ी के प्रति आस्था व्यक्त की है यथा-

"श्री हरिवंश सुमिरजस गाऊँ | राधाकृष्ण चरण रति पाऊँ |
"

(दा. च., पृ.30)

राधा को इस सम्प्रदाय में अधिष्ठात्री देवी के रूप में चित्रित किया है | इसलिए कवि ने राधा की महिमा में 'श्री राधा सु प्रताप यश' की रचना की है और राधा को कृष्ण का अभिन्न अंग माना है कि इन पंक्तियों में स्पष्ट है-

"श्री वृन्दावनराधा निजु | निशि दिन श्याम न छाँडत पास |
ज्यौं फनि मनि त्यागै नहीं ||
जैसे जल जल के जु तरंग || रवि अरु धाम, छाँह-दुम संग
यौं राधा हरि जानिवै |"

(दा. च., पृ.56)

इसलिए राधा नाम स्मरण का महत्वांकन करते हुए कवि ने कहा है-

"जो सुमिरै राधा वर नाम |सब मुखसिंधु अभै निजधाम |"

(दा. च., पृ.45)

कवि ने भगवान के निराकार और साकार दोनों रूपों के प्रति आस्था दिखाई है | साकार के अंतर्गत वे कृष्ण एवं राधा के प्रति आस्था चित्रित करते हैं तो निराकार के अंतर्गत वो इस चराचर जगत के प्रत्येक अवयव को कृष्ण के अस्तित्व से ही चलायमान मानते हैं | कवि का विश्वास है कि जिस प्रकार कृष्ण ने बड़े-बड़े पापियों को क्षण में तार दिया उसी प्रकार कृष्ण अपने भक्तों को भी संकट एवं पाप कर्मों से मुक्ति देंगे | जैसे कि इस उदाहरण से स्पष्ट है-

"नाम अनन्त परमपद लहिये | 'कृष्ण' नाम सर्वोपरि कहिए
|

आरज-पथ तजि,भजै कन्हाई |होहि भक्ति नित मोह रहाई ||"

(दा. च., पृ.59)

भक्ति का वर्णन करते हुए स्वामी चतुर्भुजदास का मानना है कि भक्ति मार्ग शुकदेव द्वारा बनाया गया है शुकदेव आचार्य ने आगम-निगम के आधार पर भक्ति का स्वरूप निर्मित किया जो संसार में इस प्रकार हिल-मिल गया है कि हंस के समान प्रवृति वाले संत व्यक्तित्व ही भक्ति करके मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं-

"मिश्रित आगम निगम पुरान |

चुनि काढ़ी शुक परम भक्ति प्रतापहि गाइहों |
जैसे छीर नीर मिलि रहे |हंस निवैरे और न लहै |
यों जु भक्ति भक्तिनि लही |"

(दा. च., पृ.11)

भक्ति के अंतर्गत कवि ने नवधा भक्ति पर बल दिया है जैसे कि निम्न पंक्तियों से स्पष्ट है-

"सावधान इहि विधि चलै तैसे |नवधा भक्ति करै पुनि ऐसे ||

श्रवण कथन सुमिरण मन दीजै ||अरु संतत सत्संगति कीजै ||"

(दा. च., पृ.27)

तथा एक अन्य स्थान पर कवि लिखता है-

"रस गुनमय मूर्ति जु सवारि |करत भक्ति नवधा जु विचारी ||"

(दा. च., पृ.52)

नवधा के साथ-साथ प्रेमा भक्ति को भी कवि ने महत्व दिया है और कृष्ण के प्रति सखियों की भक्ति को प्रेमाभक्ति का मूल कहा है जैसे –

"भक्ति जहां कथि कही सही नवधा जु बताई
प्रेम लक्ष्छना प्रगटि निवहि ब्रज बुधवनि गाई |"

(दा. च., पृ.58)

भक्ति के संदर्भ में कवि ने मंदिर संस्कृति का भी वर्णन किया है और भक्त को मंदिर की मर्यादा के प्रति सचेत करते हुए कहा है-

"सावधान हरि सदन सिधारै | करै नहीं अपराध विचारै |

पनही पहर न सनमुख जाई |जल फल आदि न सन्मुख खाई |

अशुचि उचिष्ट न मंदिर पैसे | आसन बांधि न सन्मुख बैसे |

अरु सन्मुख नहि पांव पसारै | अनुग्रह करै न कहू मारै ||
"

(दा. च., पृ.27)

धार्मिक प्रासंगिकता हेतु कवि ने गुरु को काव्य में सर्वोपरि स्थान दिया है, क्योंकि सच्चा गुरु ही साधक को ईश्वर तक पहुँचा सकता है और शिष्य को सत्य का अनुभव जिस पराविद्या से होगा, वह विद्या केवल गुरु ही दे सकता है | गुरु ही मन में उपजी द्वैतभावना को समाप्त कर व्यक्ति को ईश्वर के साथ मिलाता है | कवि ने गुरु को एक ऐसे महान व्यक्ति के रूप में चित्रित किया है जो मनुष्य को माया मोह और विषयों से दूर रखता है जैसे –

"गुरु सोई, हरि साधु सिवावै | साधु सोई जो विषै छुड़ावै |
"

(दा. च., पृ.5)

कवि का यह मानना है कि बयालीस लाख जल में और बयालिस लाख थल में जन्म लेने के पश्चात ही धर्म-कर्म के

कारण मनुष्य शरीर प्राप्त होता है जैसे कि इस उदाहरण से स्पष्ट है –

"बहुत बार तन गौ जब पायौ | पुनि ओसरो मनुज-करि आयौ |"

(दा. च., पृ.30)

फिर इस शरीर को धारण कर सुकर्म करने चाहिए | भक्तों का चरित्र श्रवण करने से भी सद्कर्मों की प्रेरणा मिलती है और भक्ति की तरफ चित लगता है|राजा बलि, भक्त सुदामा, माण्ड़व्य ऋषि, अजामिल, राजा नृग, प्रहलाद, जड़ भरत, व्याध, गीध, गणिका आदि के चरित्र विशेष स्थान रखते हैं जैसे-

"जो यह जस निकें कै सुनै | अर्थ विचार करै मन गुनै |
ताहि भक्ति उपजै धनी | भक्ति प्रतापहि गाईहौ ||"

(दा. च., पृ.17)

"भक्ति, आभूषण भक्ति है" (दा. च., पृ.22) में कवि ने इस बात पर भी बल दिया है कि भक्ति में बड़ी शक्ति है भक्ति बड़े-बड़े पापियों को भी मोक्ष प्रदान करती है | उक्त रचना में कवि ने भक्ति को चार प्रकार की मुक्तियों-सालोक्य, समीप्य, सारुप्य एवं सायुज्य को वरदान स्वरूप देना चाहता है तो सद भक्त का ह्रदय पुकार कर उठता है और भक्त का विश्वास है कि मोक्ष के बाद तो कृष्ण का सामीप्य नहीं रहेगा अत: भक्ति मुक्ति से मधुर है जैसे-

"चार मुक्ति मोहन वर देत | भक्त! भक्ति तजि ताहि न लेत |
कहत कृष्ण यह बात क्यौं ?
मीठी भक्ति मुक्ति ते आहि | सो इस अति जन जाचत चाहि ||"

(दा. च., पृ.51)

ईश्वर के प्रति अनन्यता दिखाते हुए कवि ने इस बात पर बल दिया है कि कृष्ण ही सबसे रक्षक हैं इसलिए सब कुछ छोड़कर केवल उन्हीं की शरण में रहना चाहिए क्योंकि कृष्ण की शरणागति ही मनुष्य को शांति प्रदान करती है जैसे कि इन पंक्तियों से स्पष्ट है-

"वेन आँन नहि चवै, नैन पुनि आन न दरसै |
श्रवण आँन नहि सुनै, चित चिन्तै नहिं आनें ||
मन वच हरि, हरि कर्म और हरि कर्म कछु न जाने ||"

(दा. च., पृ.62)

यही नहीं भक्ति के अंतर्गत कवि मिलन सुख को भी सर्वोपरि कहा है | जिस प्रकार बूंद समुद्र में मिलकर उसकी विराटता में मिल जाती है उसी प्रकार मानव ईश्वर में लीन होकर अपने अपने अस्तित्व को समाप्त कर उसी परमसत्ता में लीन हो जाता है उसके सारे दुख-दर्द दूर हो जाते हैं | इसलिए नाम स्मरण पर बल देते हुए कवि ने कहा है-

"नाम अनन्त परमपद लहिये | 'कृष्ण' नाम सर्वोपरि कहिये |"

(दा. च., पृ.45)

कृष्ण प्राप्ति के मार्ग को सरल बताते हुए कवि ने कर्मकांडों को तिलांजलि दी है | ईश्वर प्राप्ति हेतु तीर्थाटन, दान, व्रत, योग, यज्ञ, जताएं बढ़ाना आदि सब को त्याग कर सदसंगति पर बल दिया है | कवि के मतानुसार-

"व्रत अरु यज्ञ छद तप दान |तीरथ योग नेम जम प्रान|
इन सबहिन के वश नहीं |
सतसंगति वस रहौं सही | जिन सब संग त्याग कै गही |
सतसंगति पेऊ तरे ||"

(दा. च., पृ.22)

केवल भक्ति ही भगवान से मिलाने वाली है पर भक्ति में जब भक्त के ह्रदय में अहं भाव आ जाता है तो भक्ति वहां से पलायन क्र जाती है | जैसे कि इन पंक्तियों से स्पष्ट है-

"भक्ति तहां भागवत जहां, भागवत भक्ति वहां |
कर्म धर्म परधान, तहां हरि भक्ति रहै कहां ||"

(दा. च., पृ.59)

कवि चतुर्भुजदास से मानव को धर्मशास्त्रों वेदों आदि का अनुकरण करने के लिए कहा है क्योंकि धर्मग्रंथ भी भटके हुए मानव को सही मार्ग पर लाकर उसका पथ प्रकाशित करते हैं | इन शास्त्रों में मानव चित की सभी दशाओं का वर्णन मिलता है जैसे-

"पढ़ै वेद व्रत दृढ़ धारि के, पै सकल ग्रंथ मत जो वैजू |
पुनि घर वसि सन्तति कीनी, सव धरकौ धर्म प्रतिपारयौ जू |"

(दा. च., पृ.7)

इसी प्रसंग में जहां नाम-स्मरण के माध्यम से राधाकृष्ण के साथ नेह के संबंध की चर्चा की है तो भगवान वहां स्वयं निवास करते हुए कहते हैं कि मैं स्वयं भक्तों में निवास करता हूँ –

"मेरे भक्त जहां हैं रहत | तहाँ सकल हरि तीरथ कहत |
सुख आनन्द सदा तहाँ |
भक्त वदन ब्रह्मा कौ वास | शिर हों, शंकर नाभि निवास |
पग किन्नर गन्धर्व सब |"

(दा. च., पृ.21)

किसी एक ही व्यक्ति से संबंध रखने वाला वैयक्तिक कहलाता है |[5]

वैयक्तिक पक्ष- व्यक्ति अर्थात् इनडिविज्युअल को अपने विशिष्ट व्यक्तित्व के कारण अन्य प्राणियों से अलग किया जा सकता है | एक सामाजिक प्राणी होने के नाते व्यक्ति का एक व्यक्तिगत जीवन भी होता है जिसमें व्यक्ति विशेष का कार्य कलाप, उसकी विचारधारा, उसके सिद्धांत , उसके मूल्य एवं उसकी ईश्वर के प्रति आस्था आदि सब आते हैं | कवि ने मानव युक्त इस ब्राह्मण्ड का स्वामी ईश्वर को बताते हुए कहा है-

"ज्यौंसकलवर्ण प्रतिबिम्ब फटिकमाहि |
ऐसे सदृश होत हरि ता कहि |"

(दा. च., पृ.6)

कवि का मानना है कि मनुष्य जन्म प्रप्ति करके मानव को भगवान की शरणागति प्राप्त करनी चाहिए इससे अशुभ का नाश होता है यथा –

"कृष्ण भक्ति मनमहि आवै तब अशुभ-रासि उठि भागै जू |
ज्यों जान अजान छियें पावक जरै, हरै पाप हारे गावै जू ||

(दा. च., पृ.10)

मनुष्य मात्र में सद्गुणों के संचार के लिए कवि ने गुरु को पथ-प्रदर्शक के रूप में बताया है क्योंकि गुरु ही शिष्य को उदात्त स्तर तक पहुँचा सकता है | कवि का मानना है-

"प्रथम शिष्य गुरु सरन सिधारै | गुन अरु शील स्वभाव निहारै |
वरनाश्रम सों ज्यारौ होई | इन्द्रीजित गुरु कीजै सोई ||"

(दा. च., पृ.24)

गुरु द्वारा दी गई दीक्षा को ही शिष्य जीवनाधार मानकर चले क्योंकि गुरु ही व्यक्ति को ऊँच-नीच एवं अच्छे-बुरे की पहचान बताता है जैसे कि इन पंक्तियों से पता चलता है-

"मंत्र तन्त्र के भेदहि पावै | वेद दुमनि को सार बतावै |

ता-पँह मंत्र जु दीक्षा लीजै | शिक्षा देई सु निश्चय कीजै ||

"

(दा. च., पृ.25)

"साधु संग सर्वोपरि आहि" (पृ.17) में सदसंगति मनुष्य में गुणों के विकास में महत्वपूर्ण योगदान देती है | कवि ने साधु व्यक्तियों का संग करने के लिए प्रेरित भी किया है क्योंकि हरि भी स्वयं इस बात पर बल देते हैं और सदसंगति व्यक्ति को दुर्गणों से बचाती भी है यथा-

"संतत अति सतसंगति करै | पर धन पर दारा परिहरै |

भक्तनि की निन्दा नहि करै | निन्दक संग दूरि परिहरै ||

"

(दा. च., पृ.16)

जैसे भक्तवर तुलसीदास कहते हैं-" बिनु सतसंग ज्ञान नहीं होई रामकृपा बिनु सुलभ न सोई ||" उसी प्रकार कवि का विचार है कि जैसे अग्नि में जलाये बिना सोना शुद्ध नहीं होता उसी प्रकार सदसंगति के बिना सद्गुणों का संचार नहीं होता-

"ज्यों सोनो सो-बार पखारै | होइ न शरू अगिनि बिनु डारै

|

अस संतत सतसंगति कीजै || साधुन को चरनोदत लीजै |

"

(दा. च., पृ.29)

लोक और समाज के कल्याण के लिए उचित ठहराया हुआ आचार व्यवहार नीति के अंतर्गत आता है |नैतिकता को अपनाकर ही व्यक्ति सव का और समाज का कल्याण कर सकता है | इसके लिए कवि ने सर्वप्रथम सदाचरण पर बल दिया है क्योंकि

इसी के बल पर ही मनुष्य ईश्वर को प्राप्त कर सकता है | इसी संदर्भ में कवि ने मानव के ग्रहणीय आचरण एवं निंदनीय आचरण दोनों रूपों पर व्यापकता से विचार किया है | कवि का मानना है कि मनुष्य की सेवा, सत्य, संतोष, संयम, द्या, परोपकार, उदारता, सहनशीलता, समदर्शिता, आदि गुणों को अपनाना चाहिए-

"तप व्रतादि कृत कर्म धर्म करि हि समर्पत |"

(दा. च., पृ.63)

समर्पण भाव लिए हुए काम, क्रोध, लोभ, मोह, को आदि के परित्याग पर बल दिया है यथा-

"काम, क्रोध, तृष्णा तजि जानी | अरु पर विषन नरक के दानी ||"

(दा. च., पृ.26)

इसके साथ ही जुआ खेलना, शराब पीना, चोरी करना, माँस खाना, आदि दुर्गणों से दूर रहने की सलाह भी दी है जैसे कि निम्नपद्यांश से स्पष्ट है-

"क्रोध आत्म-धात न कीज | जुआ खेलत, दृष्टि न कीजै ||
मद अरु मांस दोष निज तजियै | और देव मनसाहू न जजियै ||
तृनहि आदि चोरी नहीं करिये | आपु समान जीवन सब धरियै ||"

(दा. च., पृ.26)

इन दुर्गुणों से बचने के लिए मनुष्य को शास्त्रों के अध्ययन की प्रेरणा दी है शास्त्रों के अध्ययन से मनुष्य में जो गुण पैदा होते हैं वे सदा आचरण योग्य है-

"जो मति उपजत सुनत पुरानहि |सो मति सदा हदैं में आनहि |"

(दा. च., पृ.27)

कवि ने इस मनुष्य शरीर को दूसरों की भलाई में समर्पित करने की भी प्रेरणा दी है | 'विमुख मुख भंजन यश' में कवि ने

मानव के कल्याण और अकल्याणकारी कृत्यों का वर्णन किया है इसमें कवि ने मन को नियंत्रित करने के लिए भक्ति को अनिवार्य बताया है और कहा है जैसे-जैसे प्रेमाभक्ति का विकास होगा वैसे ही इस देह के दुर्गुण मिटते जाएंगे यथा-

"चतुर्भुज मुरलीधर भक्ति हित तनक सशल्य नष्टहि करै |

ज्यौ सुर सरी-जल-कुम्भ में सुरा बूंद रचक परै ||"

(दा. च., पृ.59)

इस प्रकार कवि मावन को एक ऐसे मन और शरीर वाला जीव कहा है जो बुराईयों को त्याग कर सद्कर्मों और नाम-स्मरण तथा प्रेमभक्ति के द्वारा जीवन सार्थक कर सकता है |

इस प्रकार कवि चुतर्भुज दास ने द्वादश्यश की रचना के माध्यम से आज के मानव को सुखद जीवन जीते हुए स्व के विकास के साथ-साथ समष्टि के कल्याण की कामना की है | निरन्तर कर्म के लिए प्रेरित करते हुए मानव को कर्मशील होने के साथ नैतिक दृष्टि से भी महान बनने की प्रेरणा दी है | कोई भी रचनाकार एवं रचना भी प्रासंगिक होती है यदि वो सर्वकालिक अपना प्रभाव बनाए हुए है और इस दृष्टि से 'द्वादश्यश' जब-जब भी मानव के समुख कठिनाइयाँ आएंगी उसे सद्कर्म की ओर ले जाने का मार्ग दिखाएगा| राधावल्लभ सम्प्रदाय के अनन्य भक्त होने के नाते कवि की इस सम्प्रदाय के प्रति आस्था होना स्वाभाविक है पर राधाकृष्ण का चित्रांकन, भक्तों पर मुरलीधर की कृपादृष्टि, मानव मन की दुविधाओं एवं भरन्तियों का निराकरण आदि के लिए यह रचना मनुष्यों का पथ प्रशस्त करती है |

<u>संदर्भ :</u>

1. नाभादास, श्रीभक्तमाल, पृ.739
2. मिश्रबन्धु, मिश्रबंधु विनोद, पृ. 246
3. हिन्दी विश्वकोश, श्री नगेन्द्रनाथ वसु, पृ.423
4. नग्रन्द्र, साहित्य का समाजशास्त्र, पृ.6

मानक हिन्दी कोश (खंड पांच) संपा. रामचन्द्र वर्मा, पृ. 124